शिक्षा, स्वास्थ्य और विकास

❑ मनुशर्मा

21 वीं सदी के प्रवेश द्वार तक आते आते विकास की अवधारणा में गुणात्मक फर्क आया है, पहले की अपेक्षा विकास की अवधारणा अधिक संश्लिष्ट और समृद्ध हुई है । यही नहीं, किसी भी देश के विकास को देखने के संकेतकों में बदलाव हुआ हे । देश की कुल आर्थिक समृद्धि और औसत प्रति व्यक्ति आय ही अब विकास का मापक नहीं रह गयी । मनुष्य ने विकास की अवधारणा के केन्द्र में जगह बनाई है और मनुष्य समाज की बेहतरी से नये संकेतक निर्मित किए गये हैं । इस तरह आर्थिक विकास से सामाजिक आयाम का ठोस संबंध निर्मित हुआ है । आज का कल्याणकारी अर्थशास्त्र विकास की अवधारणा में मनुष्य जीवन को गुणवत्ता प्रदान करने वाले सभी नीतिगत आयामों को समाहित करता है । इसका सबसे प्रभावशाली उदाहरण नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन का लेखन-चिंतन है ।

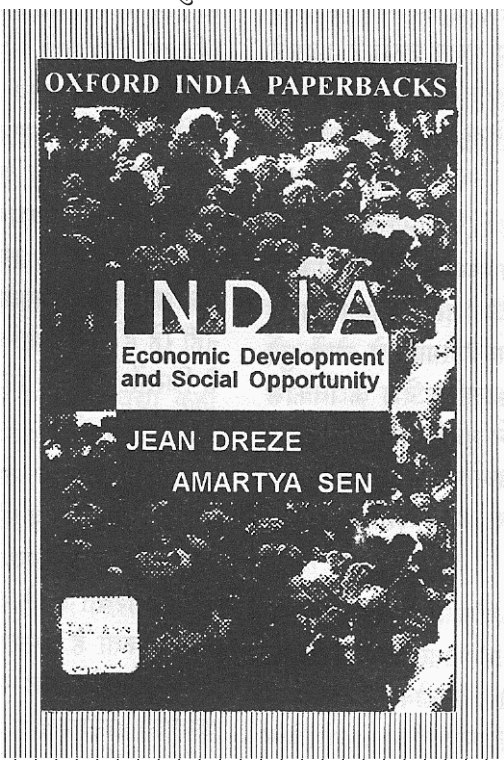

मनुष्य का सर्वांगीण विकास और उसके जीवन स्तर की बेहतरी आज विकास के विमर्श की मूल अन्तर्वस्तु है। भले ही मानव विकास रिपोर्टो में मनुष्य को ''मानव संसाधन'' कहा जाता हो, वह चिंता के केन्द्र में है । इस बात को लेकर भी नीति-निर्माताओं में सहमति बनती नजर आती है कि यदि विकास को स्थायित्व प्रदान करना है तो सभी मनुष्यों को शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी आधार भूत सुविधाएं मुहैया करानी हैं और जल, जंगल,जमीन आदि प्राकृतिक सम्पदाओं के सम्बर्धन की जरुरत है ।

जब हम विकास अवधारणा को गत्यात्मक और विकासशील मानते हैं तो शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी मानवीय अहर्ताएं और भी महत्वपूर्ण हो उठती हैं । अमर्त्य सेन ने शिक्षा और स्वास्थ्य की बहुआयामी भूमिका को सूत्रबद्ध किया है । मनुष्य की स्वतंत्रता के संदर्भ में मूल्यवान मानते हुए वे इनकी दोहरी उपयोगिता देखते हैं। वे मानते हैं कि बेहतर शिक्षा और स्वास्थ्य व्यक्ति के लिए अपने आप में ही एक अहम उपलब्धि हैं। एक व्यक्ति को स्वतंत्रता के उपभोग के लिए इन्हें अर्जित करने से महत्वपूर्ण अवसर खुलते हैं। दूसरे स्तर पर वे स्वास्थ्य और शिक्षा की उपकरणात्मक और प्रक्रियागत भूमिका देखते हैं । इसके अन्तर्गत स्वास्थ्य और बेहतर शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को आजीविका और आर्थिक अवसरों के उपयोग में सुविधा होती है । जिस व्यक्ति की आय के स्रोत पर्याप्त हैं वह स्वतंत्रता का उचित उपयोग कर सकता है । शिक्षित समाज स्वास्थ्य संरक्षा और सामाजिक सुरक्षा जैसी आवश्यकताओं को लेकर सामूहिक विचार और प्रभावी कार्यवाही कर सकता है।

यही नही, शिक्षित समुदाय उपलब्ध सुविधाओं और सांस्कृतिक अवसरों का सही उपयोग करते हुए इन्हें विकसित कर सकता है । स्कूली शिक्षा के प्रसार से बाल-श्रम जैसी समस्या (जो भारत में काफी गंभीर है) का स्वत: उन्मूलन हो जायेगा । स्कूली शिक्षा में बच्चों, विशेष रूप से बालिकाओं को परस्पर अन्त:क्रियाशील होने का मौका मिलता है जिससे उनके सोच का दायरा बढ़ता है। वंचित तबकों और महिलाओं में शिक्षा का प्रसार उनके सशक्तिकरण और राजनीतिकरण को बल प्रदान करता है। वे लैंगिक व जातिगत विषमता और जनतांत्रिक अधिकारों के लिए संगठित प्रतिरोध और आन्दोलन कर सकते हैं । लेकिन विकास की अवधारणा को ''औसत'' के खाने से निकालकर जब ''सार्विक'' तक ले जाने की बात आती है तो अमर्त्य सेन का विषमता-विमर्श प्रासंगिक हो जाता है । हरेक व्यक्ति के जीवन स्तर की गुणवत्ता का प्रश्न अत्यंत चुनौती पूर्ण है । प्रथमत: तो इससे जनतांत्रिक सत्ता, विकेन्द्रित प्रणाली और स्वतंत्र मीडिया की वांछनीयता संबद्ध है । दूसरे स्तर पर संबंधित आवश्यकता, मसलन शिक्षा और स्वास्थ्य की ढांचागत सुविधाओं की बात है। अंत में उपलब्ध सुविधाओं की गुणवत्ता का सवाल है।

शिक्षा और स्वास्थ्य जीवन-स्तर की गुणवत्ता के लिए आवश्यकता और उपकरण दोनों हैं। बेहतर जीवन स्तर के लिए व्यक्ति का सामर्थ्य विकास और अवसरों का सृजन जरुरी है । इससे व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलती है और एक आत्म निर्भर व्यक्ति सामाजिक कार्यों में सहभागिता तथा स्वतंत्रता का उपभोग करने में समर्थ होता है । इसलिए शिक्षा और स्वास्थ्य का सार्वजनीकरण एक सुदढ़ सामाजिक संरचना का गठन करता है।

निश्चय ही भारत में शिक्षा और स्वास्थ्य का सार्वजनीकरण एक चुनौती भरा किन्तु सर्वाधिक अहम मुद्दा है । इसके लिए सर्वप्रथम तो राजनीतिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता है ताकि ये दोनों मुद्दे राजनीतिक एजेन्डे पर प्राथमिकता पायें। हालांकि देश के विकास कार्यक्रमों में एक औपचारिक चिंता तो इन मुद्दों पर इधर दिखने लगी है किन्तु शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं के आधारभूत ढांचे को देश व्यापी स्तर पर मूर्त रूप देना अभी लगभग अधूरा कार्यभार है।

दूसरी ओर इन सेवाओं का जो उपलब्ध ढांचा विद्यमान है, वह गुणवत्ता की शर्त पर पूरी तरह खरा नहीं उतरता । यदि कहीं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र या स्कूल है भी तो वहां डाक्टर या शिक्षक अनियिमित है । अनेक स्थानों पर पद रिक्त पड़े हैं या अप्रशिक्षित लोग कार्य कर रहे हैं । जो लोग काम कर रहे हैं, वे संसाधनों के भारी अभाव से जूझ रहे हैं । ऐसे में, इन सेवाओं की गुणवत्ता को सुनिश्चित करना तात्कालिक मुद्दा बन जाता है ।

विकास के और आयामों की तरह शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में हमारे यहां विकट विषम स्थितियां विद्यमान है । यह विषमता यदि शहर बनाम गांव के स्तर पर दिखती हैं तो वंचित, आदिवासी और अल्प संख्यक तबकों में भिन्नताओं सहित उपस्थित हैं। महिलाएं शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में परिधि पर हैं जबकि बच्चों में स्कूल छोड़ने वाले बच्चों, कुपोषित बच्चों और बाल श्रमिकों की खासी तादाद है । विषमता का प्रस्तुत क्षैतिजिक और रेखीय स्वरूप हमसे गंभीर ध्यान और संवेदनशीलता की मांग करता है। इसका निहितार्थ है कि हमें स्थितिजन्य संदर्भो के अनुरूप विशिष्ट योजना और कार्यक्रम बनाने होंगे । यहां विकास को 'औसत' और 'एकरूपता' में देखने वाली दृष्टि कारगर और न्याय संगत नहीं होगी बल्कि विकास की वह समग्र दृष्टि अपनानी होगी जो समाज के विभिन्न स्तरों के प्रति संष्लिष्ट और संवेदनशील है ।

तब, व्यक्ति के क्षमता संवर्धन और उसके लिए अवसरों का सृजन करने हेतु विकास के सभी आयामों को एक्यबद्ध और संग्रथित करना सार्थक हो सकता है । बहरहाल हम शिक्षा और स्वास्थ्य को लेकर एक साझे अभियान की भूमिका तो बना ही सकते हैं । जैसा कि शुरू में कहा गया, व्यक्ति के विकास में इन्हें मिलाकर देखा जाना विकास के सामाजिक आयाम को ठोस और स्थायी रूप देता है । यदि इन दोनों मुद्दों को लेकर जमीनी स्तर पर संयुक्त अभियान की रूपरेखा बनायी जाये तो वह निश्चय ही अधिक कारगर होगी। इसके महत्व को समझने के लिए हम महिला सशक्तीकरण के कुछ सफल अनुभवों को देख सकते हैं । जहां महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा, क्षमता-सम्बर्धन और आजीविका के लिए बहुआयामी और सघन कार्यक्रमों के ज्यादा प्रभावी नतीजे सामने आये । ऐसा नहीं कि शिक्षा और स्वास्थ्य के संयुक्त कार्यक्रम नहीं चलाये गये या चल नही रहे हैं किन्तु यहां जोर वृहद स्तर पर सुनियोजित साझे कार्यक्रम है जिसमें परिप्रेक्ष्य संगति हो ।

आखिर में, अमर्त्य सेन के भारत विषयक चितन से एक और बात उद्धृत करना चाहेंगे वह है- जन सक्रियता वे कहते हैं कि शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता, सेवाओं की गुणवता और अवसरों के उपयोग आदि हरेक स्तर के समुचित क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए व्यापक जन सक्रियता के उभार की आवश्यकता है। भारत जैसे देश में जहां की अधिकांश आबादी निरक्षरता और कुछ सामाजिक व सांस्कृतिक रूकावटों के कारण उपलब्ध संसाधनों व अवसरों का लाभ नहीं उठा पाती, वहां जन सक्रियता के उभार की विशेष भूमिका है और इसे उभारना हम सबका दायित्व है ।◆